संदर्भित ग्रन्थों की अकारादि क्रम से तालिका

१. अभिधान राजेन्द्र कोश
२. अन्तकृद्दशांग
३. आचारांग सूत्र
४. आवश्यक चूर्णि
५. आवश्यक सूत्र
६. उपासकाचार
७. उत्तराध्ययन
८. जैन आचार
९. जैन आगम साहित्य : मनन और मीमांसा
१०. तत्त्वार्थ सूत्र
११. दशवैकालिक सूत्र
१२. दर्शनसार
१३. निशीथ भाष्य
१४. भगवती आराधना
१५. भगवती सूत्र
१६. मूलाचार
१७. सागार धर्मामृत
१८. स्थानांग
१९. श्रावक धर्म दर्शन

जैन मंत्र योग

–श्री करणीदान सेठिया

दो तरह के कर्म होते हैं–शुभ व अशुभ। भोगना दोनों को पड़ता है। जैसा कर्म उपार्जन करेंगे वैसा ही फल भोगेंगे। कर्म पौद्गलिक है। जो कर्म हम भोगते हैं वे चतुःस्पर्शी हैं। ये अदृश्य हैं–ये देखे नहीं जा सकते। क्योंकि ये सूक्ष्म है। कर्म पुद्गलों का सम्बन्ध सूक्ष्म शरीर से है, स्थूल शरीर से नहीं है। जब आत्मा स्थूल शरीर को छोड़कर निकलती है तो उसके साथ दो शरीर और रहते हैं। सूक्ष्म व अति सूक्ष्म–यानि तैजस् तेजोमय पुद्गलों का और कार्मण यानि कर्मपुद्गलों का। तैजस् शरीर का तो फोटो भी लिया जा सकता है–कार्मण शरीर का नहीं। जब तक ये कर्मपुद्गल आत्मा के साथ जुड़े रहेंगे, आत्मा मुक्त नहीं होगी।

तब प्रश्न आता है कि इनका आत्मा के साथ संबंध होता कैसे है? वासना, ज्ञान, संस्कार व स्मृति से तो इनका कोई सम्बन्ध है नहीं। इनका सम्बन्ध है केवल राग और द्वेष से। इन दो स्थानों से ही आत्मा के साथ इनका सम्बन्ध होता है और फिर कभी न कभी इनको भोगना पड़ता है। जिस तरह के बन्ध हम करेंगे उसी तरह का फल भोगेंगे। जब उनका विपाक हो जाता है तब उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है और वे हट जाते हैं–विसर्जित हो जाते हैं। जब उनका उदय होता है तब उनके आंतरिक कारणों को खोजने का, उनको हटाने का प्रश्न आता है और उनके भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण प्रस्तुत हो जाते हैं। दो तरह के कर्म होते हैं। शुभ व अशुभ यानि पुण्य के व पाप के। यह सत्य है कि पुण्य का फल पुण्य और पाप का फल पाप होगा। पर कभी-कभी उल्टा भी हो जाता है जैसे–है तो पुण्य-परन्तु फल भोगेंगे पाप का, है पाप और फल मिल जावेगा पुण्य का। यह संभव है कोई आश्चर्य नहीं है ऐसा होता है। जाति परिवर्तन के द्वारा यह संभव है। पुण्य के कर्म परमाणु संग्रह से पुण्य का बंध हुआ और ऐसा कोई पुरुषार्थ हुआ कि उस संग्रह का जात्यंतर हो गया। थे तो पुण्य के पर प्रमाणु पर बन गए पाप के परमाणु। इसी तरह पाप का बंध हुआ इसमें सारे परमाणु संग्रह पाप से जुड़े हुए थे किन्तु ऐसा पुरुषार्थ हुआ–ऐसी साधना की गई कि उस संग्रह का जात्यान्तर हो गया। इसी तरह जो सुख देने वाले परमाणु थे वे दुःख देने वाले बन गए और जो दुःख देने वाले परमाणु थे वे सुख देने वाले बन गए। कौन जानता है कि कौन से कर्मपुद्गल निकाचित हैं और कौन से दलिक। इसीलिए महावीर कहते हैं कि पुरुषार्थ करो। कर्म करते रहो।

कहने का तात्पर्य है कि सब कुछ हमारे हाथ में है–जरूरत है पुरुषार्थ की। निमित्त, माध्यम चाहे जिसे बना लें। वह हमारे चिंतन पर निर्भर है। दो साल बाद आने वाली बीमारी को, रोग को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डॉक्टर आज ही बता देते हैं। एक ज्योतिषी ग्रह दशाओं की गणना करके, रेखा शास्त्री हस्तरेखा व मस्तक रेखा देखकर, छाया शास्त्री-छाया को माप कर हमारे साथ वर्तमान व भविष्य में होने वाले परिवर्तन को बता देते हैं। तब उसके निदान व उपचार के लिये हम खोज करते हैं।

रोग एक है कारण की खोज अनेक है और उपचार अलग-अलग। आध्यात्मिक महापुरुष उपचार बतायेंगे–दया-दान-तपस्या-ध्यान व शुभ भावना, डॉक्टर, वैद्य, हड्डी, एक्यूपंक्चर व मेगनेट विशेषज्ञ अपने ढंग से निदान व उपचार बताएंगे। रेखा शास्त्री, ज्योतिषी, मंत्र-तंत्र के ज्ञाता अपने तरीके से।

जब हमें यह ज्ञात हो जाता है कि किन पाप कर्म पुद्गलों का उदय हुआ है या आगे होने वाला है। कौन से ग्रह अभी अनुकूल चल रहे हैं और कौन से प्रतिकूल और फिर कब कौन से अनिष्टकारी होंगे तब हमें सोचना होता है कि किसका माध्यम लें–जिनके प्रयोग से इनसे छुटकारा मिल सके। अध्यात्म का, दवा का, रत्न व वनस्पति का या तंत्र-मंत्र का। यदि हम मंत्र-तंत्र का सहारा लेते हैं-तो फिर वैसे मंत्रों की व उनके विधि विधान की व उनके विशेषज्ञों की खोज करनी होगी।

जैन मनीषियों ने पंच परमेष्ठियों को नमस्कार करने के लिए-एक पद्य की रचना की और वो बन गया मंत्र, मंत्र ही नहीं महामंत्र। इस महामंत्र की सबसे बड़ी विशेषता है कि जब इसका आत्मशोधन के लिए प्रयोग किया जाता है तब इसके साथ बीजाक्षरों का प्रयोग नहीं किया जाता है और जब कोई सिद्धि की दृष्टि से इसका जप किया जाता है तब इसके साथ बीजाक्षरों का योग किया जाता है।

आत्मशुद्धि के लिए, कर्म निर्जरा के लिए इस महामंत्र का जप आप जब चाहें-जिस दशा में हों शुरू कर सकते हैं। इसमें माला, वस्त्र, दिशा और किसी कर्मकाण्ड का कोई बन्धन नहीं–परन्तु समर्पण भाव होना चाहिए, कोई चाह व इच्छा नहीं। जब चाहें स्मरण करना शुरू कर दें–अपने आपको समर्पित कर दें उस महामंत्र की आराधना में। यदि आपकी इच्छा-शक्ति, श्रद्धा व विश्वास उसके प्रति दृढ़ है। प्राणशक्ति के साथ इस महामंत्र की आराधना जुड़ जाती है–तो कर्मक्षय होगा–आत्मशुद्धि होगी-निश्चित रूप से आत्मा हलकी होगी।

मंत्र बहुत ऊपर का काव्य है उसकी प्रेरणा मन से ऊपर के अधिमानस से आती है। उसकी भाषा बहुत अधिक गंभीर और सारगर्भित होती है। उसका अर्थ उसके वाहक शब्दों की अपेक्षा बहुत अधिक विस्तृत और गंभीर होता है। उसके लय तथा छंद में शब्दों से भी अधिक शक्ति होती है। उसका मूल चेतना के किसी ऐसे स्तर में होता है जो हमारी ऊपरी चेतना को पीछे से सहारा दिये रहती है। परन्तु इतनी ऊँचाई पर पहुँचना बहुत ही असाधारण बात है, क्योंकि इसके लिये जरूरी है कि मनुष्य या कम से कम उसकी चेतना का कोई भाग, साधारण मन की उड़ान से बहुत ऊँचा उड़ सके।

मंत्र एक जीवन्त सत्ता है। सच्चा मंत्र एक सच्ची सृष्टि का अमोघ विधान है। मंत्र आरोपित हो गया तो सिद्धि निश्चित है। कोई इसे रोक नहीं सकता। यदि हम दृढ़ आस्था, विश्वास, निष्ठा व भक्ति के साथ अन्तर्मन से मंत्र जाप शुरू करते हैं–तो मन की एकाग्रता के अभाव में भी मंत्र की ग्रहणशीलता अत्यन्त प्रखर होती है–वह अपना प्रभाव अवश्य दिखाती है। इसलिए चंचल चित्त से भी किया गया मंत्र-जाप कल्याणकारी ही होता है। ध्यान व मंत्र को अलग नहीं किया जा सकता है। ध्यान व मंत्र जाप की एकाग्रता द्वारा हम कार्मण शरीर यानि अतिसूक्ष्म शरीर तक पहुँचकर उन मलिन परमाणुओं तक पहुँच सकते हैं–उन्हें प्रभावित कर सकते हैं, उनमें प्रकंपन पैदाकर सकते हैं। सूक्ष्म शरीर तक पहुँचेंगे तो उससे अनेक सिद्धियाँ मिलेंगी। जिस तरह का मंत्र ग्रहण करेंगे उसी तरह की सिद्धि प्राप्त करेंगे।

हम कोई भी चिंतन करें, कल्पना करें, विचार करें, उसका माध्यम शब्द होगा। सारा जगत शब्दमय है। मंत्र एक कवच है। इससे ससांर में होने वाले प्रकंपनों से बचाया जा सकता है। मंत्र के शब्दों का जो संयोजन है–उसी पर सारा निर्भर है। जिन मनीषियों को यह ज्ञात है कि किस अक्षर की, शब्द की क्या ऊर्जा है, इससे कौन से पुद्गल-परमाणु निकलेंगे वे ही शब्दों का संयोजन कर सकते हैं–मंत्र निर्माण कर सकते हैं।

मुस्लिम चिन्तकों ने 'हु' शब्द को अपनाया-अल्हा 'हु' अकबर। बौद्ध विद्वानों ने 'हूँ' शब्द को ॐ मणिपद्मे 'हूँ' और जैन मनीषियों ने ह्रीं शब्द को जिसमें वे चौबीस तीर्थंकरों का ही वास मानते हैं। आप इन तीनों का जप करके देखें–उनका सारा सम्बन्ध नाभि-कमल (मणिपुर चक्र) से है। जब आप इनका जप करेंगे-पेट अन्दर की और सिकुड़ता जावेगा–नाभि की ओर। परन्तु इन बीजाक्षरों के शब्दों के परमाणु अलग-अलग हैं–उनकी ऊर्जा-अलग है। आभामंडल का, वलय का अलग तरह निर्माण होगा–अलग तरह की इनसे शक्ति पैदा होगी। वो अपना अलग-अलग कार्य करते हैं, पर हैं अत्यन्त शक्तिशाली।

शब्द में अनन्त शक्ति होती है। बड़ी अद्भुत शक्ति से वह भरा हुआ होता है। वही बात चित्र व आकृतियों में होती है। जिस तरह सांथिये चार प्रकार से लिखे जाते हैं और उनसे निकलने वाले परमाणु अलग-अलग होते हैं–अलग-अलग उनका काम है। ठाणांग सूत्र में अष्ट मंगल का वर्णन मिलता है–ये भगवान के आगे-आगे चलते हैं–लेकिन इनका कार्य क्या है–क्या फल देते हैं–किन अनिष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गलों से बचाव करते हैं–अपने यहाँ जहाँ तक मैंने खोज की है। इनका वर्णन कहीं-नहीं मिलता है।

संकल्प शक्ति, इच्छा शक्ति और मन की शक्ति को विकसित करने के लिए मंत्र की साधना का विधान है इसकी साधना के द्वारा, जप के द्वारा ऊर्जा शक्ति बढ़ती है, प्राण शक्ति जागृत होती है। तब उसके प्रयोग दो दिशाओं में होते हैं। एक दिशा है सिद्धि की ओर दूसरी है आन्तरिक व्यक्तित्व के परिवर्तन की। तैजस् शरीर का विकास होने पर सम्मोहन, वशीकरण, वचन-सिद्धि, रोग निवारण, विचार संप्रेषण आदि अनेक चमत्कारिक सिद्धियाँ उपलब्ध होती हैं।

यदि इच्छा-शक्ति का जागरण हो जाये। इच्छा व इच्छा शक्ति में भेद हैं, फरक हैं। जब तक अज्ञान रहता है तब तक इच्छा रहती है और ज्ञान तीव्र होने पर वही इच्छा, इच्छा शक्ति का रूप धारण कर लेती है। जब तक आत्मा उस अनुत्तर ज्ञान को प्राप्त नहीं करती तब तक उसकी इच्छा, इच्छा मात्र है, इच्छा शक्ति नहीं है। इच्छा-शक्ति के द्वारा मनचाहा नियंत्रण करना संभव है। भावना और इच्छा-शक्ति का योग हर प्रकार की सिद्धि को संभव बना सकते हैं। विचारों को धारण करने वाले शब्द किसी भी पदार्थ के माध्यम से गमन कर सकते हैं। अत्यन्त प्रबल इच्छा-शक्ति के द्वारा जो रहस्यमयी शक्ति सक्रिय होती है वह शक्ति पूर्णतया स्वचालित और अवैयक्तिक होती है। उसका लक्ष्य गुण दोष से कोई सरोकार नहीं रखता। श्राप देने में यही शक्ति काम करती है। गुण दोष से बिल्कुल हटकर-इससे उसका कोई सम्बन्ध नहीं।

इच्छा की तृप्ति हुए बिना मुक्ति भी नहीं होती। जब तक एक भी वासना अतृप्त रहेगी–तब तक मुक्ति असंभव है। काम का त्याग, इच्छा का परित्याग व वासना को दूर करके ही मुक्ति प्राप्त की जा सकती है–सृष्टि चक्र से बाहर जाया जा सकता है।

तंत्र-मंत्र, औषधियां, रत्न व वनस्पतियां-इनका अचिन्त्य प्रभाव होता है। जिसकी कोई कल्पना नहीं की जा सकती। प्रत्येक पदार्थ से अनंत परमाणु निकलते हैं और अनंत परमाणु वे ग्रहण करते हैं। एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ में परमाणु संक्रमित होते हैं। प्रत्येक पदार्थ दूसरे पदार्थ से प्रभावित होता है। हम भी अपने आपको इन संक्रमणों से नहीं बचा सकते हैं। जिस ग्रह में जो व्यक्ति जन्म लेता है उन ग्रहों के विकिरण व्यक्ति को प्रभावित करते हैं। इस आकाश में विचरण करने वाले ग्रहों के परमाणु भी हमें संक्रान्त करते हैं, प्रभावित करते हैं। इसीलिए ज्योतिषियों ने रत्न धारण करने का विधान किया। ग्रहों से आने वाले विकिरण को झेलने की रत्नों में असीम क्षमता होती है। इनको धारण करने से उन विकिरण से होने वाले दुष्प्रभाव से बचा जा सकता है। घटना का जो निमित्त बनता है व निमित्त टल जाता है, वनस्पतियों का प्रभाव भी बहुत शक्तिशाली होता है। रत्नों के अभाव में वनस्पतियों के प्रयोग का विधान भी बताया गया है। वो भी वो ही काम करते हैं जो रत्न करते हैं।

एकाक्षी नारियल, हाथाजोड़ी, रुद्राक्ष-ये भी तो वनस्पतियों के फल है। बहुत काम करते हैं भाग्य परिवर्तन में। जिस तरह वनस्पतियों को कूट-पीसकर, घोटकर अवलेह, भस्म बनाते हैं उसी तरह यदि इनको भी ऊर्जा से भर दिया जाय, जागृत कर लिया जावे तो ये भी बहुत प्रभावशाली कार्य करते हैं–अकल्पनीय शक्ति का जागरण होता है इनमें। वही बात दक्षिणावर्त्तीशंख में है। सनातन संस्कृति के ग्रन्थों में जहाँ पुरुषोत्तम क्षेत्र का विवरण आता है वहाँ बताया गया है कि महाशून्य से बैकुण्ठ का स्वरूप दक्षिणावर्तीशंख के सदृश्य दिखाई देता है। इसलिए पूर्ण विधि विधान के साथ इनको जागृत कर घर में स्थापित किया जावे तो बहुत ही उत्तम, भाग्यशाली व लक्ष्मीप्रद माना गया है।

रंग पांच होते हैं–श्वेत, रक्त, पीला, नीला और काला। महामंत्र के पाँचों पदों का ध्यान भी पांच अलग-अलग इन्हीं रंगों के साथ अलग-अलग केन्द्रों पर किया जाता है। नौ ग्रहों के भी ये ही पांच रंग होते हैं। इन ग्रहों को योगियों ने हमारे शरीर में अलग-अलग जगह इनको स्थापित किया है। जैन मनीषियों ने निम्न रूप से बताया है–

महामंत्र के पद्य		ग्रह	रंग		ध्यान		रंग का स्वभाव
ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं	–	चन्द्र और शुक्र	श्वेत	–	ज्ञान केन्द्र	–	कर्म निर्जरा करने वाला
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं	–	सूर्य और मंगल	रक्त	–	दर्शन केन्द्र	–	वशीकरण करने वाला
ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं	–	गुरु	पीला	–	विशुद्धि केन्द्र	–	स्तम्भन करने वाला
ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं	–	बुध	नीला	–	आनन्द केन्द्र	–	प्रतिपक्षी को विक्षुब्ध करने वाला
ॐ ह्रीं णमो लोए सव्व साहूणं	–	शनि, राहु, केतु	काला	–	शक्ति केन्द्र	–	मृत्यु व पीड़ा देने वाला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो ग्रह अनुकूल नहीं है–प्रतिकूल चल रहे हैं या भविष्य में अनिष्टकारी बनने वाले हैं तो उसी ग्रह के रंग के साथ महामंत्र के उस पद्य का जप-ध्यान पूजा पूर्ण विधि विधान से चालु किया जाए तो निश्चित ही उसमें सुधार होगा, उन कर्म पुद्गलों का क्षय होगा। मैं एक ही ग्रह का पूर्ण विधान बता रहा हूँ–ताकि निबन्ध लम्बा न हो जावे। जैसे सूर्य की दशा चल रही है वो अनिष्टकारी है तो उसके लिए बताया गया है:–

मंत्र - ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं।

जप - ११००

मंत्र - ऊं ह्रीं पद्मप्रभवे नमस्तुभ्यं मम शान्तिः शान्तिः

जप - एक माला रोज।

उपासना - भगवान पद्मप्रभु के अधिष्ठायक देव कुसुम की पूजा।

दिशा - उत्तर या पूर्व। निद्रा के समय भी मस्तक पूर्व की ओर रहना चाहिए या दक्षिण की ओर।

रंग प्रयोग - वस्त्र, आसन व माला का रंग लाल-जप व पूजा के समय

स्नान - कनेर, दुपहिरिया, नागरमोथा, देव दार, मैनसिल, केसर, इलायची, पदमाख, महुआ के फूल और सुगन्धि वाला के चूर्ण को पानी में डाल कर स्नान करें।

व्रत - ३० रविवार के तीस व्रत करें लगातार।

धारण - रत्न-माणिक्य, वनस्पति-बिल्वपत्र की मूल, अंगूठी-ताँबा की, रत्न या मूल चांदी में जड़वा कर रविवार को मध्याह्न में ऊं ह्रीं ह्रीं सः सूर्याय स्वाहा।

इस मंत्र की एक माला उस पर जप कर अनामिका अंगुली में या भुजा में धारण कर लें।

दान - सोना, मुंगा, ताँबा, गेहूँ, घृत, गुड़, लाल कपड़ा, लालचन्दन, रक्तपुष्प व केशर।

समय - सूर्योदय काल।

यंत्र :

६	१	८
७	५	३
२	९	४

धारण विधि-रविवार के दिन अष्टगंध स्याही, अनार की कलम से भोजपत्र पर लिखकर ताँबा, चांदी या सोने के मादलिये में डालकर-लाल डोरे में पिरोकर पुरुष दाहिनी भुजा व स्त्री गले में धारण कर लें।

इस तरह प्रत्येक ग्रह के अलग-अलग विधान बताए गए हैं।

पता :
जे. पी. काम्पलेक्स शाप नं. ८
डोर नं. ८-२४-२६, मेन रोड
पो. राजमुंदरी-५३३१०१ (आ.प्र.)

हाँ, मैं जैन हूँ

–श्री परिपूर्णानन्द वर्मा

धुरन्धर साहित्यकार तथा विद्वान लोग मुझसे प्रायः पूछ बैठते हैं कि मैं आध्यात्मिक सभाओं में अपने को जैनी क्यों कहता हूँ जबकि मैं अपने को कट्टर सनातन धर्मी, घोर दकियानूसी हिन्दू तथा श्राद्ध, तर्पणा, पिण्डदान तक में विश्वास करने वाला भी कहता हूँ। मेरा उनसे यहाँ निवेदन है कि मैं वह जैनी नहीं हूँ जो अपने नाम के आगे तो जैन लिखते हैं पर घोर कुकर्मी, मद्य-माँस सेवी तथा रोजमर्रा के जीवन में छल कपट करते रहते हैं। जब मैं श्रद्धापूर्वक भगवान महावीर या पार्श्वनाथ वीतराग की प्रतिमा के सम्मुख नतमस्तक होकर उनसे यही चाहता हूँ कि उनके दर्शन से मैं भी वीतराग, माया मोह बन्धन से छूट जाऊँ तो मुझे दया भी आती है इन मूर्खों पर जो वीतराग से सांसारिक पदार्थ या सुख माँगने जाते हैं। मुझे उन करोड़ों हिन्दू नर-नारी की मूर्खता तथा अज्ञान पर रुलाई आती है सर्व अन्तर्यामी देवी-देवताओं से कुछ माँगते हैं–हमें यह दे दो, वह दे दो। मानो वह देव न तो अन्तर्यामी है, हमें जानता-पहचानता है. वह सो रहा है और हम उसे जगाकर अपनी आवश्कयता बतला रहे हैं। हमारे धर्म शास्त्र बार-बार निष्काम कर्म का उपदेश देते हैं पर कौन हिन्दू उसे मानता है। कब्र पर फातिव पढ़ने वाला मुसलमान या गिर्जाघर में ईसाई यह क्यों भूल जाता कि ईश्वर सर्वज्ञ है तभी तो उपास्य है। हमने एक प्रभु सत्ता तथा सार्व भौम शक्ति मानकर अपना काम हल्का कर लिया कि एक कोई सर्व शक्ति हैं जिसका सहारा है। इसलिए ईश्वरवादी होना तो सरल है पर जैन मत पर चलने वाला जो एक परम तत्व

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org